जोबनेर कृषि

दिसम्बर, 2023 वर्ष : 8 अंक : 12 प्रति अंक मूल्य 25 रुपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
SRI KARAN NARENDRA AGRICULTURE UNIVERSITY JOBNER

प्रसार शिक्षा निदेशालय
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

जीरे की फसल में कीट-रोगों की रोकथाम

डॉ. रामनिवास शर्मा (सहायक आचार्य, पौध व्याधि),
डॉ. कृष्णा अवतार मीना (सहायक आचार्य, कीट)*,
डॉ. दिलीप सिंह (सहायक आचार्य, उद्यान) एवं
डॉ. एन.सी. पन्त (सहायक आचार्य, जैव रसायन)
कृषि महाविद्यालय, कुम्हेर-321201, राजस्थान
*** कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर-321201, राजस्थान श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर)**

भारत में 90 प्रतिशत जीरे की खेती राजस्थान एवं गुजरात में की जाती है। राजस्थान में बाड़मेर, जालोर, जोधपुर, नागोर, पाली, अजमेर, जयपुर, भीलवाडा एवं टोंक जिलों तथा गुजरात में बनासकाठा, मेहसाना, पालनपुर, अहमदाबाद, जगुदान तथा चरोतक क्षेत्रों में जीरा मुख्य रूप से उगाया जाता है। जीरे में लगने वाले कीट व रोगों की वजह से इसके उत्पादन की गुणवत्ता व मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यदि उचित समय पर इसमें लगने वाले कीट व रोगों की पहचान करके उनकी रोकथाम की जावे तो इनसे होने वाले नुकसान में कमी करके उत्पादन की मात्रा व गुणवत्ता दोनों को बढ़ाया जा सकता है।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबन्धन :

उखटा (विल्ट) : यह रोग बीज व भूमि जनित होता है। इस रोग का प्रकोप पौधों की किसी भी अवस्था में हो सकता है परन्तु युवावस्था में प्रकोप ज्यादा होता है। खेत में इस रोग से ग्रसित पौधे कद में छोटे रह जाते हैं तथा पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं एवं अन्त में पौधे मुरझा कर सूखने लगते हैं। रोग की उग्रता में पौधा भूमि से निकलने के पहले ही मर जाता है। यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम फॉर्मा स्पीशीज क्यूमिनाई नामक फफूँद से होता है।

प्रबन्धन :-

- ✓ रोग रोधक किस्म जैसे जी.सी. 4, आर.जैड. 223, आर.जैड. 223 आदि को बुवाई के काम में लेवें।
- ✓ रोग रहित पौधों से प्राप्त बीज ही बोना चाहिये।
- ✓ रोग ग्रसित खेत में जीरे की बुवाई नहीं करे।
- ✓ गर्मी में खेत की गहरी जुताई करें।
- ✓ कम से कम तीन वर्ष का फसल चक्र ग्वार–जीरा, ग्वार–गेहूं, ग्वार–सरसों अपनायें।
- ✓ बुवाई से पूर्व सरसों या नीम की खली 2.5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में मिलावें।
- ✓ बीज को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. कवकनाशी या 6 ग्राम ट्राइकोडर्मा हरजेनियम जैविक कवकनाशी से प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें।
- ✓ जीरे में उखटा रोग की रोकथाम के लिए बुवाई से पूर्व 10 किलो ट्राइकोडरमा हरजेनियम को 200 किलो आर्द्रता युक्त गोबर की खाद में अच्छी तरह मिला कर 10–15 दिन के लिए छाया में रख दें। इस मिश्रण को बुवाई के समय प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला दें।

झुलसा ब्लाईट

रोग के लक्षण प्रारम्भ में पौधे की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो कि धीरे धीरे काले रंग में बदल जाते हैं। पत्तियों से यह रोग वृंत, तने एवं बीज पर भी पहुँच जाता हैं। पौधों के शिरे झुके हुए नजर आते हैं। यह रोग इतनी तेजी से फैलता है कि रोग के लक्षण दिखने के बाद फसल दूर से ही झुलसी नजर आती है। रोग वृद्धि के लिए लगभग 3 दिन तक अधिक आर्द्रता 90 प्रतिशत) एवं 230 से 280 सेल्सियस तापक्रम की आवश्यकता होती है। फसल में फूल आने के दिनों में यदि आकाश में बादल छाये रहते हैं तो इस रोग का प्रकोप होना प्रारम्भ हो जाता है। फूल आने से लेकर फसल पकने तक यह रोग कभी भी हो सकता है। मौसम अनुकूल होने पर यह रोग बहुत तेजी से फैलता है। यह रोग आल्टरनेरिया बर्नसाई नामक फफूँद से होता है।

प्रबन्धन :

- ✓ रोग रोधक किस्म जैसे आर.जैड. 223 आदि को बुवाई के काम में लेवें।
- ✓ स्वस्थ बीज ही बोने के काम में लेवें।
- ✓ उचित सिंचाई प्रबन्ध करें, अधिक सिंचाई नहीं करें तथा ज्यादा पानी वाली फसलें जीरे की फसल के पास नहीं लगावें।
- ✓ जीरे के खेतों में पौधों की संख्या आवश्यकता से अधिक नहीं रखें।
- ✓ गर्मी में गहरी जुताई करें व फसल चक्र अपनावें।
- ✓ कार्बेन्डाजिम या मेन्काजेब 2 ग्राम प्रति किलो बीज या ट्राइकोर्डमा 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करें।
- ✓ फसल में पुष्पन शुरू होने के बाद खासतौर से जब वातावरण में नमी बढ़ जावे एवं आकाश में बादल दिखाई दें, तब फसल पर मैन्कोजेब 75 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम या थायोफिनेट मिथाईल 70 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम या प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. 1 मिली या डाइफेनोकोनाजोल 25 ई.सी. 0.5 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यक होने पर 2–3 छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दोहरावें।

छाछिया/चूर्णी फफूंद पाऊडरी मिलड्यू : जीरा उगाये जाने वाले सभी क्षेत्रों में इस रोग का प्रकोप होता है। जीरे की फसल पर डेढ़ माह बाद यह रोग दिखाई देता है। यह रोग ईरीसाइफी पोलीगोनी नामक फफूँद से होता है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप दिखाई देते हैं। धीरे–धीरे पौधे के तने एवं बीज पर रोग फैल जाता है एवं पूरा पौधा दूर से ही सफेद दिखाई देता है। रोग बढ़ने पर पौधा गन्दला व कमजोर हो जाता है। यदि रोग का प्रकोप पौधों की शुरू की अवस्था में हो जाता है तो बीज नहीं बनते हैं, यदि बीज बनते हैं तो छोटे व अध पके रह जाते हैं। यह रोग 260 से 350 सेल्सियस तापक्रम में तेजी से फैलता है।

प्रबन्धन :

- ▼ जीरे की बुवाई 15 नवम्बर के आसपास कर देवें। ज्यादा देरी से बोने से रोग का प्रकोप अधिक होता है।
- ▼ रोग के लक्षण दिखाई देते ही गन्धक चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करे या घुलनशील गंधक 80 डब्ल्यू.पी. 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर या डाइनोकेप 48 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी या हेक्जाकोनाजोल 5 एस.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव या भुरकाव 10 से 15 दिन बाद दोहरावें।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबन्धन :

मोयला (एफिड) : इसके आक्रमण से फसल को काफी नुकसान होता है।

यह कीट पौधे के कोमल भाग से रस चूस कर हानि पहुंचाता है तथा इसका प्रकोप प्रायः फसल में फूल आने के समय प्रारम्भ होता है।

प्रबन्धन :

▼ नियन्त्रण हेतु डायमिथोएट 30 ईसी या मैलाथियान 50 ई सी एक मिलीलीटर प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिये। आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन के बाद छिड़काव को दोहरायें। अथवा

▼ जीरे में मोयला के नियन्त्रण हेतु मोयला का प्रकोप दिखाई देते ही थायोमेथोग्जाम 25 डब्ल्यू.जी. (25 ग्राम सक्रिय तत्व / हैक्टेयर 2.5 ग्राम / 10 लीटर पानी का घोल) का प्रथम छिड़काव तथा क्लोथियानिडिन 50 डब्ल्यू.जी. (20 ग्राम सक्रिय तत्व / हैक्टेयर 1.0 ग्राम / 10 लीटर पानी का घोल) का दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के 10 दिन के अन्तराल पर करना चाहिये।

उपरोक्त कीट एवं रोगों का समन्वित प्रबन्धन हेतु निम्न उपाय अपनावें :

प्रथम छिड़काव : अंकुरण के 30–35 दिन बाद मैन्कोजेब 75 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

द्वितीय छिड़काव : अंकुरण के 45–50 दिन बाद जाईनेब 68 प्रतिशत + हेक्जाकोनाजोल 4 प्रतिशत का 2 ग्राम प्रति लीटर या मेटीराम 55 प्रतिशत + पाइराक्लोस्ट्रोबिन 5 प्रतिशत का 3.5 ग्राम प्रति लीटर या पाइराक्लोस्ट्रोबिन 13.3 प्रतिशत + इपोक्सीकोनाजोल 5 प्रतिशत का 1.5 एम.एल. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने के साथ डाईमिथोएट 30 ई.सी. का 0.1 प्रतिशत अथवा गोमूत्र 10 प्रतिशत व अजेडीरेक्टीन 0.3 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

तृतीय छिड़काव : दूसरे छिड़काव के 10–15 दिन बाद उपरोक्त अनुसार ही छिड़काव करें।

भुरकाव : यदि आवश्यक हो तो तीसरे छिडकाव के 10–15 दिन बाद 25 किलोग्राम गंधक के चूर्ण का प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें।

गुलदाउदी

डॉ. पुष्पा उज्जैनिया, सहायक प्राध्यापक (उद्यान विभाग),
डॉ. कमल महला, एस.आर.एफ. (उद्यान विभाग) एवं
डॉ. एम. आर. चौधरी, प्राध्यापक (उद्यान विभाग)
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

गुलदाउदी को 'जाड़ो की रानी, क्वीन ऑफ ईस्ट, ओटम क्वीन' के नाम से जाना जाता है एवं यह जापान का राष्ट्रीय फूल भी हैं। फूल वाले पौधों में गुलदाउदी का विशिष्ट स्थान है। इसके फूल उस समय प्राप्त होते है जब अन्य फूल बहुत कम मात्रा में मिलते है। राजस्थान में इसकी खेती व्यवसायिक तौर पर सफलतापूर्वक की जाती है। इसके खुले फूलों का उपयोग मुख्य रूप से पूजा–अर्चना, माला, गजरा, वेणी व अन्य सजावटी कार्यों में किया जाता है। इसके अलावा गुलदाउदी के फूलों का गमलों, फूल की क्यारियों व बाग की शोभा बढ़ाने के लिये भी उपयोग किया जाता है। आजकल गुलदाउदी की उन्नत किस्में विभिन्न रंगो (लाल, सफेद, पीले व गुलाबी) में उपलब्ध है जो लम्बे समय तक फूल देती है।

जलवायु व भूमि : यह एक शरद ऋतु का पौधा है। ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में इसके पौधे का विकास अच्छा नहीं होता है। अच्छे पुष्पन के लिये 8 से 16 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। गुलदाउदी के फूलने के लिये दिन छोटा और रात लम्बीं होना आवश्यक है। प्राकृतिक रूप से ये स्थिति सितम्बर माह में शुरू होती है। पौधे के उचित विकास के लिये खुली धूप वाली जगह उपयुक्त रहती है।

गुलदाउदी को सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु अधिक पुष्प उत्पादन हेतु अच्छे जल निकास वाली दोमट अथवा बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध् हो सबसे उत्तम रहती है।

प्रसारण : एक वर्षीय गुलदाउदी बीजों द्वारा उगाई जाती है। इसके बीज नर्सरी में अक्टूबर माह में बोते है। बीज बोने से 4–6 सप्ताह बाद तैयार पौध की खेत में रोपाई की जाती है।

बहुवर्षीय गुलदाउदी का प्रसारण दो प्रकार से किया जाता है।

कलम द्वारा : इस विधि में कलम जून के अन्त में सीधे बढ़ने वाले कोमल तनों के उपरी भाग से 10 सेन्टीमीटर लम्बा कट लगाते है। प्रत्येक कलम की नीचे की पत्तियां हटा कर रेत की बनी क्यारियों में लगाते है तथा लगाने के तुरन्त बाद पानी देते है। कलमों में शीघ्र जड़ों के फुटान हेतु सेरेडेक्स् पाउडर या इन्डोल ब्यूटायरिक एसिड रसायन को 5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर कलमों के निचले सिरे को आधा मिनट तक घोल में डुबोकर क्यारी में लगावें। ये कलमें 20 से 25 दिन बाद खेत व गमलों में रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

अन्तःभूस्तारियों द्वारा : पुष्प उत्पादन समाप्ति के बाद पौधे को भूमि की सतह के पास से पौधे के आधार से कुछ भाग छोड़कर पौधो को काट दिया जाता है एवं बाद में पौधों के चारों तरफ गुड़ाई एवं खाद डालकर सिंचाई कर दी जाती है। इन पौधों के कटे हुए भाग से कुछ समय बाद पौधो से अन्तःभूस्तारियों निकलती है जिनको अलग–अलग काट कर निकाल कर लगा सकते है जो कि नये पोधों को जन्म देती है।एक पौधे से लगभग 8 से 10 अन्तःभूस्तारियां निकलती है जिनको अन्यत्र काट कर लगा दिया जाता है। अन्तःभूस्तारियों की जून–जुलाई माह में तैयार खेत में रोपाई की जाती है।

उन्नत किस्में

गुलदाउदी में एकवर्षीय और बहुवर्षीय दोनों प्रकार की किस्में पायी जाती है।

(अ) एक वर्षीय गुलदाउदी स्थानीय किस्में :-

सफेद, पीली व बहुरंगीकिस्में, रोमोयों, येलो स्टोन, ग्लोरिया, बलान्का् एवं इस्साबेल।

(ब) बहुवर्षीय किस्में :

क्र.सं.	किस्म का नाम	श्रंग	फूल आने का समय
1.	बसन्तिका	पीला	दिसम्बर–जनवरी
2.	मेरा	सफेद, पीला	अक्टूबर–नवम्बर
3.	शारदा	पीला	सितम्बर–अक्टूबर
4.	कुन्दन	पीला	अक्टूबर–नवम्बर
5.	बीरबर साहनी	सफेद	अक्टूबर–नवम्बर
6.	ननाका	पीला	नवम्बर–दिसम्बर
7.	बग्गी	सफेद	नवम्बर–दिसम्बर
8.	सलेक्शन–5	गुलाबी	नवम्बर–दिसम्बर
9.	सलेक्शन–6	पीला	नवम्बर–दिसम्बर
10.	रेडगोल्ड	लाल–पीला	नवम्बर–दिसम्बर
11.	फलर्ट	लाल	नवम्बर–दिसम्बर
12.	श्यामल	बैंगनी	नवम्बर–दिसम्बर
13.	मेघामी	गुलाबी	सितम्बर–नवम्बर
14.	गुले शाहिर	केसरिया	मध्य नवम्बर

क्रमशः 1—7 तक की किस्मों में छोटे फूल एवं क्रमशः 8—14 तक की किस्मों में बड़े आकार के फूल आते है।

(स) कट फ्लावर वाली किस्में –

अप्सरा, बीरबल साहनी, जयंती जुबिली, पुर्णिमा, नानाको एवं मेघामी।

(द) माला हेतु उपयुक्त किस्में :

बग्गी, बसन्ती, शान्ति, इन्दिरा, राखी, बीरबल साहनी, बसन्तिका, शरद माला, मीरा, बीरबल साहनी एवं जया।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा विकसित किस्में पूसा अनमोल, पूसा सोना, पूसा केसरी, पूसा अरुणोदय, पूसा आदित्य, पूसा चितरक्षा आदि है।

भारतीय उद्यानिकी अनुसंधान संस्थान, बैंगलुरु द्वारा विकसित किस्में अर्का पिंक स्टार (यह किस्म गमलों के लिए सबसे ज्यादा उपयुक्त किस्म), अर्का स्वर्णा, अर्का गंगा आदि।

राष्ट्रीय वानस्पतिक अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ द्वारा विकसित किस्में कुसुम, लिटिल डार्लिगं, मिनी जैसी, मिनी क्वीन, रंगोली, हिमांशु, शान्ति, बिन्दिया आदि हैं

भूमि की तैयारी : जिस खेत में गुलदाउदी की रोपाई करनी हो उसकी पहली जुताई ग्रीष्म ऋतु में मिट्टी पलटने वाले हल से करें फिर पाटा लगाकर तीन—चार जुताई देशी हल से कर मिट्टी को भुरभुरी बना लें। खेत को समतल कर सिंचाई की सुविधानुसार क्यारिया बना लेनी चाहिये। भूमि की आखरी जुताई के समय 25—30 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद बिखेर कर भली—भॉति मिला दें। पौध की रोपाई के पूर्व 100 किलों यूरिया, 500 किलो सुपर फॉस्फेट व 100 किलो म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिला देवें। शेष 100 किलो यूरिया को दो भागों में विभाजित कर रोपाई के चार व आठ सप्ताह बाद खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें। इसके पौधों में ज्यादा युरिया देना हानिकारक होता हैं। दीमक का प्रकोप हो तो क्यूनालफोस 1.5 प्रतिशत चूर्ण प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलावें।

रोपाई : खेत में पौधो की रोपाई करते समय पौधे व कतार से कतार की दूरी छोटे फूल वाली किस्मों में 25 सेन्टींमीटर तथा बड़े फूलों वाली किस्मों में यह दूरी 30—45 सेन्टीमीटर रखें।

सिंचाई : वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती है परन्तु लम्बे समय तक यदि वर्षा न हो तो सिंचाई कर देनी चाहिये। वर्षा के बाद कलियां बनते समय व फूल खिलते समय सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। अतः सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिये।

देखभाल : खेत में खरपतवार नहीं पनपे इस हेतु समय—समय पर निराई— गुड़ाई करते रहना चाहिये। पौधे बड़े होने पर हवा से पौधों के गिरने का डर रहता है। अतः पौधों की उंचाई के अनुसार लकड़ी का सहारा देना चाहिये। गुलदाउदी में चुंटाई करना एक आवश्यक शस्य क्रिया है इससे पौधा की लम्बाई बढ़ना रूक कर अधिक पार्श्व शाखाऐं निकलती है। पहली चुंटाई 4 सप्ताह बाद व दूसरी 7 सप्ताह बाद करें।

प्रमुख कीट एवं रोग

सनफ्लावर लेस विंग बग : यह एक चमकदार पारदर्शी छोटा कीट है। यह कीट कोमल पत्तियां को खाता है, जिससे पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती है। नियन्त्रण हेतु मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल 1.5 मि.ली. या मिथाईल डिमेटान 25 ईसी 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

मूलग्रन्थी (सूत्रमि) रोग

इसके प्रकोप से फूल छोटे रह जाते हैं एवं लम्बे समय तक नही ठहर पाते है। नियन्त्रण हेतु पौधे तैयार करते समय कार्बोफ्यूरान 3 जी 6 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से डालें तथा पौधें बदलते समय 3 ग्राम प्रति गमले में (12 इंच की गइराई में) दवा डालें।

फूलों की तुड़ाई का समय एवं उपजः–

गुलदाउदी में फूल बढाने के लिए जिब्रेलिक अम्ल व पैक्लोब्यूट्राजाल (कोलतार) का छिड़काव कर सकते हैं तथा फूल आने की प्रक्रिया को कुछ समय तक रोकने के लिए इथाइलिन, मैलिक हाइड्राजाइड, एनएए व साइक्लोसील का भी प्रयोग किया जा सकता हैं। फूलों के पूरे खिल जाने पर नियमित रूप से फूलों की तुड़ाई करते रहना चाहिये ताकि पौधों पर नई कलियां निरन्तर आती रहें और अधिक उपज प्राप्त हो सकें। प्रति हेक्टेयर 100—150 क्विंटल फूलों की उपज प्राप्त होती है। कट—फ्लावर्स की उम्र गुलदाउदी मे अधिक बढ़ाने के लिए 1.5 प्रतिशत सूक्रोज़, 200 पी पी एम हाइड्रोक्सी क्वीनोलीन सिट्रेट के घोल में रखें।

गेहूँ व जौ की फसलों में प्रमुख रोगों एवं कीटों से बचाव के उपाय

हीरा कुमारी एवं शीतल कुमावत
कीट विज्ञान विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

गेहूँ व जौ रबी मौसम की मुख्य अनाज की फसलें है। इन फसलों में कई प्रकार के रोग व कीट लगते हैं जो इन फसलों में बहुत हानि करते हैं। इन कीटों का समय पर उचित प्रबन्धन करना अति आवश्यक है। उचित प्रबन्धन के अभाव में ये रोग व कीट बहुत नुकसान कर देते हैं तथा कभी—कभी पूरी फसल को नष्ट कर देते है। गेहूॅ व जौ की फसलों में प्रमुख रूप से पाइरकुलरिया ब्लास्ट व अनावृत कण्ड रागे लगते है तथा सत्रूकृमि, मोयला व दीमक आदि कीट नुकसान पंहुचाते है जिनके नियंत्रण के उपाय इस लेख में वर्णित है।

पाइरकुलरिया ब्लास्ट

पाइरकुलरिया ब्लास्ट के कारण होने वाला उत्पादन नुकसान 100 प्रतिशत तक हो सकता है। पैराग्वे में पहली बार इस रोग के प्रकोप से 70 प्रतिशत से अधिक नुकसान दर्ज किया गया। बांग्लादेश में ब्लास्ट से संक्रमित खेतों को जला दिया गया। यह रोग पाइरिकुलरिया ग्रामिनिस ट्रिटिसाईं कवक से होता है।

रोग के लक्षण : गेहूँ का विस्फोटक रागे पौधे के सभी ऊपरी भागों को संक्रमित करता है। सबसे विशिष्ट लक्षण स्पाइक संक्रमण पर होते है। स्पाइक के संक्रमण को आसानी से फ्यूजेरियम हेड ब्लाइट से भ्रमित किया जा सकता है। हेड इंफेक्शन ग्लूमश, अवंस वह रचिस पर हो सकता है। संक्रमित ग्लमूश, लाल भूरेरंग के साथ गहरे भूरे रंग के धब्बे से गृसित होते है। रेचीस का काला पड़ना, निचले नोड्स के दानों का सिकुड़ना प्रमुख लक्षण है।

प्रबन्धन : रोगग्रस्त क्षेत्रों से किसी भी गेहूं के बीज सामग्री की अनुमति नहीं देकर गेहूं ब्लास्ट का नियंत्रण किया जा सकता है। गेहूं को एक सीजन के लिए छोड़ देने से गेहूं ब्लास्ट को कम किया जा सकता है।

उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में आनुवंशिक प्रतिरोध और कवकनाशी के उपयागे से गेहूं ब्लास्ट का प्रबंधन किया जा सकता

है। ब्लास्ट संक्रमित क्षेत्रों से गेहूं के बीज को बुवाई के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। सिंचाई की स्प्रिंकलर प्रणाली गेहूँ के ब्लास्ट को फैलाने में मदद करती है इसलिए इससे बचना चाहिए। कार्बेन्डाजिम 50डब्ल्यूपी 1ग्राम/किलोग्राम बीज उपचार से बीज इनोकुलम को नियंत्रित कर सकते है। प्रारंभिक संक्रमणों को कार्बेन्डाजिम 50डब्ल्यूपी 1ग्राम/किलोग्राम या ट्राईसाइक्लाजोल 75डब्लूपी 0.6 ग्राम/किलोग्राम या प्रोपीकोनाजाले के जरूरत आधारित स्प्रे के उपयोग से भी नियंत्रित किया जा सकता है।

अनावृत कण्ड : रोगी पौधों में बालियॉ प्रायः स्वस्थ पौधों की अपेक्षा कुछ पहले निकलती हैं तथा सभी बालियाँ काले चर्णूका रूप ले लेती है और उनमें दाने नहीं बनते है। यह काला चूर्ण रोग जनक कवक के असंख्य कंड बीजाणु है। बीजाणु बालियों से आसानी से अलग हो जाते है एवं शुष्क मौसम में लगभग सभी बीजाणु वायु में उड़ जाते है। कभी–कभी ऐसी बालियाँ भी बनती है, जो केवल आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाती है।

नियंत्रण के उपाय : रोग रहित प्रमाणित बीज बोए जाने चाहिए। बीजों को वाइटावेक्स (75 प्रतिशत कार्बोक्सिन, बाविस्टिन 50 प्रतिशत) कवकनाशी दवाओं से 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा के हिसाब से उपचारित करके इस रोग को अच्छी तरह से रोका जा सकता है। रोगी बालियों को तोड़कर जला देना चाहिए। सौर उपचार विधि से गर्मी के दिनों में कड़ी धपू में सुबह 4 घटें के लिये पानी में भिगोकर दापेहर 12 से 4 बजे तक 4 घंटे के लिए कडी धूप में सुखा देना चाहिए। पानी में भिगोने से बीज में स्थिर कवक क्रियाशील हो जाता है, जो कडी धूप में सुखाने पर मर जाता है।

रोली/किट्ट रोग : गेहूँ की फसल पर तीन प्रकार की रोली लगती है–पीली रोली, भूरी रोली और काली रोली ये तीन विभिन्न कवकों द्वारा उत्पन्न होती हैं। परन्तु भूरे एवं पीली रोली से क्षति अधिक होती है। उत्तरी भारत में काली रोली प्रायः देर से लगती है। इससे फसल को अधिक हानि नही हो पाती है।काली तना रोलीः तनों पत्तियों एवं पर्णाच्छदों पर लंबे, लाल भूरे रंग के धब्बे दिखाई पड़ते तनों पर इनकी सख्या अधिक होती है। ये धब्बे लम्बाई में 5–7 मि.मी. अधिक एवं एक–दूसरे से मिले रहते है। इन धब्बों के फटने पर इनमें से एक भूरा चूर्ण निकलता है। रोग के भयंकर प्रकोप में पौधे अत्यन्त क्षीण हो जाते हैं। दाने नहीं बनते हैं और यदि बनते भी है तो हल्के एवं सिकुड़े हुए होते है।

पीला धारीदार किट्ट रोली : इस रोग में पत्तियों पर छोटे–छोटे अंडाकार हल्के पीले रंग के धब्बे कतारों मेंपाये जाते है। यह रोग गेहूँ में बालियाँ लगने के पहले ही प्रकट होता है। अतः नुकसान अधिक एवं सिकुडे हुए हाते है। अत्याधिक प्रकोप हो जाने पर भी पौधें की पत्तियाँ सूख जाती हैं व बालियों में दाने बिल्कुल नहीं पड़ते हैं। रोगी पौधों की जड़ों की बढ़वार कम होती है, जिससे उपज घट जाती है।

नियत्रंण के उपाय : देर से पकने वाली गेहूं की किस्मों पर भूरे एवं काले किट्ट से अधिक हानि होती है। अतः फसल समय पर बोनी चाहिए। नाइट्रोजन प्रधान उर्वरकों की अत्यधिक मात्रा किट्ट रोगों को बढ़ाने में सहायक होती है, अतः उर्वरकों के संतुलित अनुपात में पोटाश की उचित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। आवश्यकता से अधिक सिंचाई भी रोग बढ़ाने में सहायक हो सकती है। रोग के प्रारंभिक अवस्था में मेन्कोजैब (डाइथेन एम–45) नामक कवकनाशी के छिड़काव से तीनों किटटों का नियंत्रण किया जा सकता है।

सूत्रकृमि प्रबन्धन

मोल्या रोग के कारण इन फसलों की पैदावार में भारी नुकसान का आंकलन किया गया है। इस रोग का प्रमुख लक्षण खेत का चप्पेदार हिस्सों में बंट जाना है। अधिक सक्रंमण पर पूरा खेत खाद्य अभाव के लक्षण दर्शाने लगता है। यह रोग सूत्रकृमि जनत रोग है। यह सूत्रकृमि जड़ पर जिस किसी स्थान पर आक्रमण करता है, पौधा उस स्थान पर नई जड़े छोड़ देता है। इस प्रकार कई पतली पतली नई जड़ों के बनने से पौधों की जड़े गुच्छेदार हो जाती है। सूत्रकृमि इन जड़ों में प्रवेश कर पौधे से पोषक तत्व तथा जल इत्यादि का अवशोषण करता रहता है, जिससे पौधे बोने रह जाते हैं और उनमें पीलापन आ जाता है। गुच्छेदार जड़ो में ध्यान से जड़ों को पानी में धोकर देखा जाए तो मोतियों की तरह चमकती हुई , सफेद रंग की छोटी–छोटी, गोल आकार की सूत्रकृमि की मादाएं चिपकी हुई देखी जा सकती है। बाद में इन मादाओं की भित्ति ऑक्सीकृत होकर भूरी हो जाती हैं, मादाएं मर जाती हैं किन्तु उनमें 300 से 400 अण्डे प्रति मादा भित्ति में रहते हैं और अगली ऋतु तक सुरक्षित पड़े रहते हैं। मादा की अण्डों से युक्त इस रचना को पुटि कहते हैं।

गर्मियों में गहरी जुताई करें : मई–जुन के महीने में 10–15 दिन के अन्तराल से 2–4 गहरी जुताई करने से सूत्रकृमि की संख्या में लगभग 40 प्रतिशत तक कमी हो जाती है। गर्मियों की गहरी जुताई करते समय ध्यान रखें कि इससे किसी प्रकार का भूमि का कटाव न हो। खरीफ में खेत खाली रखने या बाजरा,मूंगफली लगाने से धान्यपुट्टी सूत्रकृमि पर काई प्रभाव नही पड़ता है।

फसल चक्र व मिश्रित फसल : दो रोगग्राही फसलों के बीच एवं रोग रोधी या अभाजे या फसल लगाने से सूत्रकृमि की संख्या आर्थिक नुकसान बिन्दु के नीचे आ जाती है। इसके लिये अभोज्य फसलें जैसे चना, सरसों गाजर, मूली, धनिया, पालक व प्याज उचित हैं जो कि सूत्रकृमि की संख्या में 47–55 प्रतिशत तक की कमी ला देती है।

कार्बनिक खादों का प्रयोग : 1 से 5 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से खल, गोबर की खाद, बुरादा या कम्पोस्ट खाद यदि रागे ग्रसित खेत में मिलाई जाये तो इससे गेहूँ व जौ की पैदावार में बढोत्तरी व सूत्रकृमि की संख्या में कमी होती है।

बुवाई की तारीख : सूत्रकृमि वर्ष में एक बार अक्टूबर–नवम्बर माह में ही अपनी पुट्टी से बाहर आता है, अतः उस समय भोज्य फसल बड़ी हो तो उस पर सूत्रकृमि का प्रभाव कम होता है। इसके लिये जल्दी बुवाई करना उचित रहता है।

नीम तेल से उपचार : 10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर वर्मी कम्पोस्ट के साथ 10 ग्राम प्रति किलो बीच, नीम का तेल प्रयोग में लेने से सत्रूकृमि की संख्या में कमी व गेहूँ की पैदावार में वृद्धि होती है, इसके साथ ही इसकी लागत भी काफी कम आती है साथ ही गेहूँ व जौ की फसल में पोषक तत्वों की पूर्ति भी हो जाती है।

रोग रोधी किस्में : जौ–राजकिरण गेहूँ–आर.डी.–2050, आर.डी. 2052, राज एम.आर.–1

मोयला : मोयले का प्रजनन ठण्डे मौसम में शुरू होता है तथा फरवरी–मार्च में इसकी सबसे अधिक संख्या होती है। यह कीट कोमल पत्तियाँ तथा बालियों से रस चूस कर नुकसान करता है। इस का प्रकोप ठण्डे आर्द्र तथा बादल वाले मौसम में अधिक होता है।

प्रबन्धन : बालियां निकलते समय या जब कीट का प्रकोप हो तब क्राइसोपरला प्रजाति या लेडी भृंग की 500 लटें प्रति हैक्टेयर मोयला ग्रसित फसल पर छोड कर इसका प्रबन्धन किया जाता है। 375 मि.ली.

डायमेथोएट 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर छिड़काव करके इसका प्रबन्धन कियाजा सकता है या थायोमिथोक्साम (25 डब्ल्यू. जी.) 50 ग्राम प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें।

सैन्य कीट : वयस्क शलभ का रंग पीला–भूरा होता है। यह सूखे या हरे पौधे या फिर मिट्टी में अण्डे देती है। इस कीट का अधिकतम प्रकोप मार्च में होता है। यह कीट पहले पौधे की बीच की कोमल पत्तियों को खाता है तथा बाद में पुरानी पत्तियों को खाता है एवं पूरी पत्ती को जालीनुमा कर देता है। कीट का अधिक प्रकोप होने पर खेत में फसल ऐसे दिखती है जैसे कोई पशु चर गया है।

प्रबन्धन : प्रकोप कम होने की अवस्था में कीट की लटों को हाथ से इकट्ठा करके नष्ट करना चाहिए। मैना, घरेलू चिड़िया, बगुला आदि पक्षियों को इस कीट की लटों को खाने के लिए आकर्षित करना चाहिए। 500 मि.ली. लीटर डाइक्लोरवोस 85 एस.एल. या एक लीटर क्यूनालफॉस 25 ई. सी. या एक किलो कार्बारिल 50 डब्ल्यू.पी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करके रसायनिक प्रबन्धन किया जा सकता है।

दीमक : दीमक गेहूँ व जौ की फसल में बुवाई के तुरन्त बाद तथा फसल पकने के समय नुकसान करती है। दीमक द्वारा खाया हुआ पौधा पूरा सूख जाता है तथा आसानी से उखड़ जाता है। जिन पौधों में देर से प्रकोप होता है वे सफेद बाली में बदल जाते है।

प्रबन्धन : दीमक प्रबन्धन के लिए खेत में से पुरानी फसल के सभी अवशेष हटा देनी चाहिए। अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद का उपयागे करना चाहिए। वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करके इसका प्रकोप रोका जा सकता है। क्लोरपाईरीफॉस 20 ई.सी. 4 मि.ली. प्रति किलो बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।

जिंक की कमी के लक्षण : जिंक की कमी के कारण पौधों में वृद्धि रूक जाती है। पत्तियां बीच की नस के पास से समानान्तर पीली पड़नी प्रारम्भ हो जाती है तथा नस हरी रहती है। इस प्रकार के पौधे छोटे–छोटे सीमित क्षेत्रों में पाये जाते हैं। यह कमी पौधों में फुटान के समय शुरु की तीसरी अथवा चौथी पत्ती से प्रारम्भ होती है।

बकरी पालन- सुगम और लाभकारी पशु पालन का नया दौर

सरोज भाटी एवं अश्वनी कुमार सिंह
पशुपालन विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ,(उ.प्र.)

प्रति ने छोटे किसानों को वरदान के रूप में बकरियों को प्रदान किया है। बकरी पालन मुख्यतः दूध और मांस के लिए किया जाता है। भूमिहीन, लघु, और सीमांत क्षेत्र के किसानों के लिए बकरी पालन एक उत्ष्ट और लाभकारी रोजगार है। यह पशु न्यूनतम खाद्य ग्रहण करके पशुपालकों को उच्च स्तर के आहार, जैसे कि दूध और मांस प्रदान करती है। उच्च रोग प्रतिरोधक क्षमता और अधिक उत्पादन के कारण निर्धनों के लिए यह सर्वश्रेष्ठ पालतू पशु माना जाता है। बकरी एक बहुउपयोगी, सीधा–साधा और किसी भी वातावरण में आसानी से ढलने वाला छोटा पशु है जो अपनी रहन–सहन और खान–पान की आदतों के कारण सभी का पसंदीदा पशु है। अच्छी आय की प्राप्ति के लिए बकरी पालन निर्धन वर्ग के लोगों के लिए एक सुविधाजनक विकल्प है, विशेषकर अकाल जैसी कठिनाईयों के समय में। बकरियों का पालन आसान होता है तथा इसका दूध बच्चों और रोगियों के लिए उपयोगी होता है, क्योंकि इसमें प्रतिरोधी क्षमता पायी जाती है। उत्कृष्ट गुणवत्ता के दूध के साथ–साथ, बकरियों से मिलने वाला मांस भी किसान को अच्छी कमाई दिलाता है। बकरी के गोबर को ''मिंगन'' कहा जाता है, जिससे श्रेष्ठ गुणवत्ता की खाद बनती है। किसान इस मिंगन को बेचकर अच्छा लाभ प्राप्त कर सकता है और इसके खाद को अपने खेतों में डालकर कृषि उत्पादन को बढ़ा सकता है। बकरी की खाल की कीमत भी अच्छी होती है। भारत में बकरी को ''गरीबों की गाय'' के नाम से भी पहचाना जाता है

राजस्थान में बकरी पालन के लाभों का समर्थन करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रमुख बिंदु–

बकरियों का आहार व्यवहार :– अपने खाने की आदत के कारण बकरी देश की सभी कृषि–जलवायु स्थितियों में अच्छे से रह सकती है। बकरियों का चरने और खान–पान का व्यवहार अन्य पशुओं से अद्वितीय होता है। उनकी मुख की विशिष्ट बनावट (गतिशील ऊपरी होठ व लचीली जीभ) उन्हें कांटेदार पत्तियां चबाने में सहायता करती है। बकरी लैंटाना, टिथोनिया और आक जैसी जहरीली झाड़ियों भी खाती है जिसे कोई अन्य पशु नहीं खाते है। इनमे शुष्क पदार्थ और फाइबर की पाचन क्षमता अधिक होती है इसलिए निम्न गुणवत्ता की वनस्पति पर जीवन निर्वाह कर सकती हैं। बकरियां बहुत छोटी घास को चरने में सक्षम होती हैं और उन पत्तों को खाने में सक्षम होती हैं जिन्हें आमतौर पर कोई अन्य घरेलू पशु नहीं खाते हैं। भेड़ या मवेशियों की तुलना में बकरियां विभिन्न प्रकार के चारे और वनस्पतियों का सेवन करती हैं। ब्राउज करना (ब्राउज करने से तात्पर्य झाड़ियों और पेड़ों की पत्तियों को खाने से है) बकरियों के आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। बकरियों को दिन में लगभग आठ से नौ घंटे ब्राउज करने का अवसर मिलता है तो बकरियां को आवास पर चारा देने की जरुरत नहीं होती है लेकिन अगर बकरियां बड़ी मात्रा में दूध व अधिक उपज देती हैं तो उन्हें अतिरिक्त फलीदार चारे के साथ–साथ सांद्रित चारा भी देना चाहिए। बकरियों को फलीदार चारा बहुत पसंद होता है। बकरियां जंगल की घास से बनी है को अनिच्छा से खाती हैं, लेकिन फलीदार फसलों से बनी हे को वे बहुत पसंद करती हैं अगर उन्हें प्रारंभिक अवस्था में काट कर बनाया गया हो तो। बकरियाँ अपने खाने में बहुत नखरे वाली होती हैं तथा एक प्रकार का चारा एक को पसंद होने पर भी दूसरी को नापसंद होता है। बकरियां रौंदी गई मिट्टी पर चारा खाने की बजाय भूखी रहना पसंद करती हैं और अन्य पशुओं की तुलना में कम नमी युक्त चारे पर आश्रित रहना पसंद करती हैं।

बकरी का दूध :– दुधारू बकरियों को चलता–फिरता दूध संग्रहण केंद्र कहा गया है, क्योंकि इससे कभी भी एक दिन में दो बार से अधिक दूध निकाला जा सकता है। बकरी के दूध का उपयोग खून में प्लेटलेट्स की संख्या बढ़ाने में किया जाता है क्योंकि यह केल्शियम, प्रोटीन, और विटामिन–डी का अच्छा स्त्रोत होता है तथा इम्यून सिस्टम के लिए भी फायदेमंद होता है। बकरी के दूध को अच्छा आहार स्त्रोत माना जाता है क्योंकि इसमें आयरन, फॉस्फोरस, और सिलिनीयम जैसे खनिज पदार्थ पाए जाते हैं। बकरी के दूध में कवक विरोधी और जीवाणु विरोधी गुणों के कारण, इसे मूत्रजननागी (यूरोजेनिटल) बीमारियों के इलाज में इस्तेमाल किया जाता है। बकरी के दूध का पाचन गाय के दूध के मुकाबले आसान होता है, क्योंकि बकरी के दूध में छोटे वसा ग्लोब्यूलस होते हैं जोकी दूध में समान रूप से होमोजनाइज्ड होते है।

बकरी का मांस :–बकरी के मांस में कोलेस्ट्रॉल कम पाया जाता है इसलिए यह स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है। बकरी के मांस का सेवन सभी धर्म के व्यक्ति करते है जिससे छोटे उद्योगों को बढ़ावा मिलता है।

बकरी की ऊन (रेशें) :–बकरियों की विभिन्न प्रजातियों में पाए जाने वाले ऊन के बाल विभिन्न उद्योगों में उपयोग होते हैं, जैसे कि चटाई और दरी बनाने के लिए।

बकरी की खाद :–बकरी से प्राप्त होने वाली खाद भूमि को उपजाऊ बनाने में मदद करती है और इसे एक उर्वरक माना जाता है, जिससे भूमि की उर्वरता में सुधार होता है।

उच्च प्रजनन दर :– बकरी दो साल में तीन बच्चे अथवा जुड़वा बच्चे पैदा करती

है, जिससे कम समय में अधिक आर्थिक लाभ कमाया जा सकता है, पशुपालकों के द्वारा।

बहुउद्देशीय उपयोग :–बकरी से दूध, मांस, ऊन, खाद, चमडे की प्राप्त होती है।

तटस्थता में सहारा :– राजस्थान की शुष्क और तटस्थ क्षेत्रफल की वजह से बकरी पालन एक उत्तम विकल्प है, क्योंकि बकरी इस क्षेत्र के स्थानीय जलवायु और भूमि की स्थिति को सहारा दे सकती है।

बंजर भूमि का उपयोग :– जो भूमि खेती के लिए उपयुक्त नहीं है वहाँ पर बकरी पालन करके पशुपालक अच्छा मुनाफा ले सकते है।

उच्च रोग प्रतिरोधक क्षमता :–बकरी की रोग प्रतिरोधक क्षमता बहुत अच्छी होती है, प्रतिकूल जलवायु का स्वास्थ्य पर अधिक बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है

अधिक उत्पादन :– प्रति इकाई निवेश पर बकरियाँ अधिक उत्पादन देती हैं।

प्रशिक्षित करना और संभालना आसान :–बकरियां सामाजिक प्राणी हैं और उन्हें प्रशिक्षित करना और संभालना आसान है, छोटे बच्चे भी बड़े आंराम से संभाल लेते है। गायों की तुलना में उनका आकार छोटा होता है, जिससे उन्हें संभालना भी आसान हो जाता है।

साफ भूमि व खरपतवार का नाश :–बकरियां बहुत अच्छी ब्राउजर होती हैं और उन्हें घास–फूस खाना बहुत पसंद होता है। आप जो भी भूमि साफ करवाने चाहते हैं उस पर इन्हें चराएं

कम संपत्ति और स्थान की आवश्यकता :–बकरी पालन में कम संपत्ति और स्थान की आवश्यकता होती है, जिससे यह राजस्थान के छोटे और मध्यम उद्यमी किसानों के लिए एक सुगम विकल्प है।

बकरी उत्पादों का आसान विपणन :–बकरी के मांस और दूध की हर बाजार में बहुत माँग है। परिणामस्वरूप, पशुपालको को सामान बेचने के लिए परेशान नहीं होना पड़ता है

तेज विकास दर :–बकरियों की विकास दर अन्य जानवरों की तुलना में बहुत तेज होती है। बकरी तेजी से परिपक्व होती हैं और कम समय में ही वयस्क हो जाती हैं।

गरीबी उन्मूलन :–बकरी पालन का व्यवसाय लाभदायक है जो कि गरीबी दूर करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

स्थानीय विविधता :–राजस्थान में स्थानीय जीवजंतु और जलवायु के अनुसार आदर्श बकरी की प्रजातियों को चयन करने से, बकरी पालन स्थानीय विविधता को सुनिश्चित करने में मदद कर सकता है।

संसाधनों का उपयोग :–बकरी स्थानीय संसाधनों का अच्छे से उपयोग कर सकती है, जैसे कि कम जल, सूखा चारा, सूखी जलवायु, जिससे उच्च पेशेवर प्रबंधन और वृद्धि हो सकती है।

शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में समर्थन :–बकरी पालन राजस्थान के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में दोनों में समर्थन प्रदान कर सकता है, जिससे विकासशील समुदायों को लाभ हो सकता है।

स्वयंपोषण :–बकरी अच्छे स्वयंपोषणी जानवर हैं और कम खाद्य खर्च में भी सही उत्पाद प्रदान कर सकती हैं, जिससे किसानों को लाभ होता है।

स्थानीय आर्थिक विकास :–बकरी पालन से स्थानीय स्तर पर आर्थिक विकास होता है, क्योंकि यह स्थानीय किसानों को रोजगार का एक स्रोत प्रदान करता है और उत्पादों की बिक्री के माध्यम से उन्हें आय मिलती है।

ऊर्जा संरक्षण :–राजस्थान की उच्च गर्मी में बकरी पालन अच्छा हो सकता है, क्योंकि इसमें अधिक ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती, और बकरी इस क्षेत्र के जलवायु को अच्छी तरह से सहती है।

बेरोजगारी का सामर्थ्य :–बकरी पालन अच्छा रोजगार का स्रोत हो सकता है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में जो लोगों को आत्मनिर्भर बनाने में मदद कर सकता है।

प्रदूषण की कमी :–बकरी पालन स्थानीय स्तर पर की जाने वाली पशु पालन की एक तरह है जो प्रदूषण को कम करने में मदद कर सकता है, जिससे आधुनिक जीवनशैली को बनाए रखने में मदद मिलती है।

आधुनिक उपजों का सामर्थ्य :–आधुनिक उपजों की मांग बढ़ रही है, और इसमें बकरी पालन का एक महत्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि इससे उच्च मूल्यवान उत्पाद प्राप्त होते हैं।

रोजगार सृष्टि :–बकरी पालन से स्थानीय किसानों को रोजगार का एक स्रोत प्राप्त होता है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

साइड इनकम :–खेती के साथ साथ 5–10 बकरियां पाल कर पशुपालक साइड इनकम ले सकते है

शिक्षा और प्रशिक्षण का स्रोत :–बकरी पालन से संबंधित तकनीकी ज्ञान और प्रशिक्षण का स्रोत मिलता है, जिससे किसान अपनी कौशल को बढ़ा सकता है।

समृद्धि का स्रोत :–बकरी पालन से समृद्धि का स्रोत बन सकता है, क्योंकि यह स्थानीय उत्पादकों को अधिक बाजार में से प्रतिस्थानित करने में मदद कर सकता है।

प्रातिक खाद्य सुरक्षा :–बकरी पालन से आपदा के समय भी प्रातिक खाद्य सुरक्षा को सहारा मिलता है, क्योंकि इससे बकरियों के उत्पादों का अधिग्रहण किया जा सकता है।

आधुनिक किसानी तकनीक :–बकरी पालन आधुनिक किसानी तकनीक का एक हिस्सा बन सकता है, जिससे उत्पादकों को बेहतरीन तकनीक से लाभ हो सकता है।

सामुदायिक साक्षरता :–बकरी पालन से संबंधित व्यापारिक और तकनीकी ज्ञान का समर्थन कर स्थानीय सामुदायिक साक्षरता का सुधार हो सकता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व :–बकरी पालन का एक और महत्वपूर्ण लाभ यह है कि यह स्थानीय सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं को सुरक्षित रख सकता है और स्थानीय विकास को प्रोत्साहित कर सकता है।

बकरियों की उन्नत नस्लें :–

दुधारू नस्लें– जमुनापारी, सूरती, जखराना, बारबरी एवं बीटल

माँसोत्पादक नस्लें– ब्लेक बंगाल, उस्मानाबादी, मारवाडी, मेहसाना, संगमनेरी, कच्छी तथा सिरोही

ऊन उत्पादक नस्लें– कश्मीरी, चाँगथाँग, गद्दी, चेगू आदि है जिनसे पश्मीना की प्राप्ति होती है।

राजस्थान में बकरियों की प्रमुख नस्लें–

जमुनापारी– इस नस्ल को नस्ल सुधार कार्यक्रमों में भी शामिल किया जाता है। यह बकरियों की सबसे बड़ी नस्ल है जो कि मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश के इटावा जिले के चकरनगर और गढ़पुरा इलाके में प्रचुरता से पाई जाती है। राजस्थान में यह भरतपुर, धौलपुर आदि में पायी जाती है इसका रंग सफेद होता है और कभी–कभी गले और सिर पर धब्बे होते हैं। इसकी नाक उभरी होती है, जिसे रोमन नोज कहा जाता है और इस पर बालों के गुच्छे होते हैं। रोमन नोज और जांघों के पिछले भाग में सफेद बाल इस नस्ल की पहचान है। लम्बे बालों को फीथर्ड कहते है जिससे गादी (Udder) ढ़की रहती है, इसके कान काफी बड़े और लटके हुए होते हैं। वयस्क नर और मादा दोनों में ही प्रायः सींग होते हैं। इनके वयस्क नर और मादा का शारीरिक भार क्रमशः 44 और 38 किलोग्राम होता है। यह एक दुगाजी नस्ल है पर इससे सबसे दूध अधिक प्राप्त होता है। इन बकरियों का दुग्ध उत्पादन औसतन 194 दिनों के दूधकाल में 200 किलोग्राम तक होता है और वर्ष भर में इनका शारीरिक भार 21–26 किलोग्राम तक हो जाता है।

सिरोही– यह नस्ल राजस्थान में प्रमुख रूप से सिरोही, अजमेर, नागौर, टोंक, राजसमंद, और उदयपुर में पाई जाती है। इस नस्ल के पशुओं में रोग प्रतिरोधक और सूखा सहन करने की क्षमता अधिक पायी जाती है। इनका आकार मध्यम होता है और इनका शरीर गठीला होता है। इन्हें मुख्यतः मांस और दूध के लिए पाला जाता है। इनका शरीर हल्का और गहरा भूरा रंग होता है, जिस पर काले, सफेद और गहरे काले रंग के धब्बे होते हैं। प्रजनन योग्य नर का औसत शरीर भार 40–50 कलो व मादा का शरीर भार 30–35 किलो

होता है। इस नस्ल की बकरिया प्रायः एक साथ 2 बच्चों को जन्म देती हैं।

मारवाड़ी– यह प्रमुख रूप से जोधपुर, पाली, नागौर, बीकानेर, जालौर, जैसलमेर व बाड़मेर जिलों में पायी जाती हैं। यह मध्यम आकार की काले रंग की बकरी होती जिसका पूरा शरीर लम्बे बालों से ढका रहता है। कान चपटे व मध्यम आकार के व नीचे की ओर लटके होते हैं। नर का औसत शरीर भार 30–35 किलो व मादा का शरीर भार 25–30 किलो होता है। इनके शरीर से वर्ष में औसतन 200 ग्राम बालों की प्राप्ति होती है जो की गलीचे/नमदा आदि बनाने के काम आते हैं। इनका दुग्ध उत्पादन 95 किग्रा. (115)दिनों में होता है।

जखराना– यह नस्ल राजस्थान के अलवर जिले और आस–पास के क्षेत्रों में पाई जाती है। इसका आकार बड़ा होता है और यह काले रंग की होती है। इसके मुँह और कानों पर सफेद रंग के धब्बे होते हैं। इसका दुग्ध उत्पादन 120 किलोग्राम (115 दिनों में) होता है और इसका औसत शारीरिक भार वर्ष भर में 20 किलो तक पहुंच सकता है। इसके वयस्क नर का औसत भार 55 किलोग्राम तक हो सकता है।

बारबरी– बारबरी मुख्य रूप से मध्य एवं पश्चिमी अफ्रीका में पायी जाती है। इस नस्ल के नर तथा मादा को पादरियों के द्वारा भारत में सर्वप्रथम लाया गया। अब यह उत्तर प्रदेश के आगरा, मथुरा एवं इससे लगे क्षेत्रों में काफी संख्या में उपलब्ध है। यह छोटे कद की होती है परन्तु इसका शरीर काफी गठीला होता है। शरीर पर छोटे–छोटे बाल पाये जाते हैं। शरीर पर सफेद के साथ भूरे या काले धब्बे पाये जाते है। यह देखने में हिरण के जैसी लगती है। कान बहुत ही छोटे होते है। थन अच्छे विकसित होते हैं। वयस्क नर का औसत वजन 35–40 किलो ग्राम तथा मादा का वजन 25–30 किलो ग्राम होता है। यह घर में बांध कर गाय की तरह रखी जा सकती है इसलिए इसे शहरी बकरी भी कहते है। इसकी प्रजनन क्षमता भी काफी विकसित होती है। 2 वर्ष में तीन बार बच्चों को जन्म देती है। इसका बच्चा करीब 8–10 माह की उम्र में वयस्क होता है। इस नस्ल की बकरियाँ मांस तथा दूध उत्पादन हेतु उपयुक्त है। बकरियाँ औसतन 1.0 किलो ग्राम दूध प्रतिदिन देती है।

बीटल– इस नस्ल से सम्बन्ध रखने वाली बकरियां भी दिखने में जमुनापरी नस्ल की भांति ही होती है, परंतु शरीर का आकार जमुनापरी से छोटा होता है। इनका रंग भूरा अथवा काले पर सफेद या भूरे धब्बे होते हैं। इस नस्ल की बकरी के कान लंबे, ऊंची गर्दन, मुड़े हुए सींग होते हैं। वयस्क मादा बकरियों का औसतन वजन 45–60 कि.ग्रा. एवं नर बकरों का वजन 65–85 कि.ग्रा. होता है। बीटल बकरियों का पालन दोहरे उद्देश्यों के लिए किया जाता है। इस नस्ल की बकरियां प्रत्येक प्रसव में एक या दो बच्चे पैदा करती हैं और यह सामान्यत वर्ष में एक बार प्रसव करती है। लेकिन इससे सम्बन्ध रखने वाली वाली बकरियां कभी कभी वर्ष में दो बार या दो वर्ष में तीन बार भी प्रसव कर सकती हैं। नस्ल की मादा बकरी प्रत्येक दिन औसतन 1.75 कि.ग्रा. दूध देती है। बाड़े में या गहन पालन पद्धति में यह नस्ल जमुनापरी से भी अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

डॉ. सुदेश कुमार
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से

दिसम्बर माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

1. गेहूं की पछेती किस्मों राज.–3077, राज.–3777, राज.–3765, राज.–4083 व राज.–4238 की बुवाई दिसम्बर माह के प्रथम पखवाड़े तक अवश्य कर देनी चाहिए। बीज दर 125 किग्रा. प्रति हैक्टेयर रखें।
2. गेहूं व जौ की खड़ी फसल में प्रथम सिंचाई के बाद 10–15 दिन तक निराई–गुड़ाई अवश्य करें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारोंको नष्ट करने के लिए बौनी किस्मों की बुवाई के 30–35 दिन के बाद आधा किलो 2, 4 एस्टर या आधा किलो 2, 4–डी एमाइन साल्ट या मेटासल्फ्यूरॉन 4 ग्राम या कारफन्ट्राजोन 20 ग्राम सक्रिय तत्व का पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर छिड़काव करें।
3. गेहूं में एकबीज पत्री एवं द्विबीज पत्री खरपतवारों के नियंत्रण हेतु सल्फोसल्फ्यूराम 75 प्रतिशत + मिथाइल मेटासल्फ्यूराम 5 प्रतिशत (80wp) का 32 ग्राम सक्रिय तत्व बुवाई के 30–35 दिन बाद 400–500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव करते समय ध्यान रखना चाहिए कि स्प्रेयर में फ्लेट फैन नोजल लगा होना चाहिए।
4. सरसों में दाने बनते समय सिंचाई करनी चाहिए। सरसों एवं मटर में पाले से बचाव हेतु हल्की सिंचाई एवं गंधक के तेजाब की 1 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी प्रति हैक्टेयर में छिड़काव करना चाहिए।
5. मटर की फसल में फली छेदक लट का प्रकोप दिखाई देने पर एसीफेट 75एस.पी. 0.5 ग्राम पति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
6. फूल गोभी एवं पत्ता गोभी में आरा मक्खी, पत्ती भक्षक लटें एवं गोभी की तितली का प्रकोप दिखाई देने पर मेलाथियॉन 5 प्रतिशत 20–25 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें या मेलाथियॉन 50 ई.सी. एक मि.ली. प्रति लीटर पानी की र से छिड़काव करें।
7. बेर में इस समय छोटे–छोटे फल लग जाते है यदि गत माह में उर्वरक नहीं दिया गया हो तो क्रमशः 220, 440, 1100, 1200 एवं 1200 ग्राम यूरिया प्रथम, द्वितीयख तृतीय, चतुर्थ, पंचम एवं 5 वर्ष से अधिक आयु के पौधों के हिसाब से प्रति पौधा देवें।
8. दूध देने वाले पशुओं को पर्याप्त हरा चारा देवें तथा सर्दी से बचायें।

प्रमुख संरक्षक : **डॉ. बलराज सिंह**
संरक्षक : **डॉ. सुदेश कुमार**
प्रधान सम्पादक : **डॉ. सन्तोष देवी सामोता**
श्री बी. एल. आसीवाल
डॉ. बसन्त कुमार भींचर
तकनीकी परामर्श : **डॉ. एम.आर. चौधरी**
डॉ. आर. पी. घासोलिया
डॉ. डी. के. जाजोरिया

बुक पोस्ट

डाक
टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।